ISSN: 2583-8849
साहित्य रत्न ई-पत्रिका अगस्त2023 वर्ष1 अंक4

एक अच्छे दोहे की रचना के लिए चार बातों का ध्यान रखना ज़रूरी है : लय, तुकांत, भाषा और भाव-संयोजन।

1- लय

जहाँ तक लय का संबंध है, सभी दोहाकार जानते हैं कि दोहे में चार चरण होते हैं : पहला और तीसरा तेरह मात्राओं का तथा दूसरा और चौथा ग्यारह का। लेकिन लय सुनिश्चित करने के लिए कुछ बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है, जैसे—

1) पहले और तीसरे चरण की शुरुआत जगण **(ISI)** से बने शब्दों से न हो, जैसे— अजीब, अमीर, कहार, ग़रीब, तमाम, सुजान, हज़ार। एक दोहा देखिए जिसकी शुरुआत कबीर से हुई है और उसमें लयभंग महसूस की जा सकती है—

ISI IS SIS SS SI ISI

कबीर कहा गरबियो, ऊँचे देखि अवास ।

काल्हि परयूँ भ्वै लेटणाँ, ऊपरि जामै घास ॥

2) यदि दो शब्दों से मिलकर जगण बन रहा हो, तो कोई बात नहीं, जैसे निम्नलिखित दोहे के तीसरे चरण में देखा जा सकता है—

S S SS SIS / SI IS II SI

जो मैं ऐसा जानती, पीत किये दुख होय।

IS ISS SIS / SI I IIS SI

नगर ढिंढोरा पीटती, पीत न करियो कोय॥

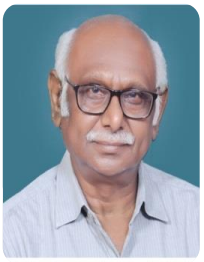

यहाँ, 'नगर' **(IS)** और 'ढिंढोरा' **(ISS)** के 'ढिं' **(I)** से मिलकर जगण बन रहा है। अतः यह अनुमन्य है, क्योंकि इसमें लय-बाधा नहीं है।

नोट : 'जगण' दूसरे या चौथे चरण के अंत में आ सकता है, जैसे उपर्युक्त दोहे के दूसरे चरण का अंत 'अवास'

यानी, जगण से हुआ है।

3) पहले और तीसरे चरण के अंत में रगण **(SIS)** आना चाहिए, न कि यगण **(ISS)**, अन्यथा लय बाधित हो जाएगी। यहाँ, यह समझने की ज़रूरत है कि गुरु के स्थान पर दो लघु आ सकते हैं, लेकिन वे मिलकर गुरु बनते हों, उनमें से कोई अनिवार्य लघु न हो, जैसे 'कमल' शब्द में 'क' अनिवार्य लघु **(I)** है और 'मल' दो लघु **(II)** मिलकर गुरु **(S)**। इसे और विस्तार से समझें। 'कमल' में तीन मात्राएँ **(III)** हैं और गण के हिसाब से 'नगण' है, परंतु शब्दोच्चारण की दृष्टि से तीन लघु वर्ण न होकर एक लघु और एक गुरु वर्ण है। इसीलिए हम इसे 'क-म-ल' न बोलकर, 'क-मल' **(IS)** बोलते हैं। इसे हम कम-ल **(SI)**नहीं बोलते। इसी प्रकार 'अलग, अगर, मगर, असर, क़लम, गगन, चलन, नगर, पवन, बशर, लहर, वचन, शरम, समय, हरम' आदि शब्द हैं। इन सबमें मात्राओं का क्रम लघु-गुरु **(IS)** है। ये गुरु-लघु के रूप

में नहीं प्रयुक्त हो सकते, भले ही तीन-मात्रिक हैं। किसी का दोहा है—

SS SS IS S , SS SI ISI

दोहा दर्पण समय का, सुंदर स्वच्छ चरित्र ।

S SS S SIS, IS ISS SI

जो जैसा है सामने, उसे दिखाए चित्र ॥

इसमें पहले चरण का अंत, 'समय का' **(IS S)** शब्दों से हुआ है। दोनों मिलकर 'यगण' बना रहे हैं। अतः चरण में लय बाधित हो गई है। इसे अगर 'वक़्त का' कर दिया जाए, तो लय की समस्या समाप्त हो जाएगी, लेकिन तब भाषा के सौंदर्य का प्रश्न उठेगा। दर्पण के साथ वक़्त बेमज़ा है। हाँ, पूरा चरण यदि, 'दोहा दर्पन वक़्त का' कर दिया जाए तो बात बन सकती है ।

पहले और तीसरे चरणांत 'यगण' आने वाले पूर्वज कवियों के अनेक चरण प्रचलित हैं, हालांकि उनमें लयबाधा है, जैसे—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, लाठी में गुन बहुत हैं, रहिमन ओछे नरन सों,

दीरघ दोहा अरथ के, कैसे निबहैन निबल जन, कौन बड़ाई जलधि मिलि,

तुलसी मीठे बचन ते, तुलसी साथी विपति के, तुलसी पावस के समय….।

4) दूसरे और चौथे चरण के अंत में जगण **(ISI)**, तगण **(SSI)** या गुरु-लघु **(SI)** आना चाहिए। यहाँ तगण यानी 'ताराज' के 'रा' को गुरु ही रहना है, उसे दो लघु के रूप में नहीं रख सकते, उसके 'ता' को भले ही दो लघु के रूप में रख लें, जैसे— अवतार। अवतार का 'अव' यानी, दो लघु मिलकर एक गुरु बन गया है। इसे **IISI** के भार पर माने या **SSI** के भार पर– एक ही बात है। ऊपर के उदाहरण में, 'दुख होय' या (करि) 'यो कोय' में 'तगण' को इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए।

5) किसी चरण में लय के लिए यह ज़रूरी है कि द्विकल **(II/S)** या चौकल **(SS/SII/IIS/ISI)** प्रयुक्त हों। यदि त्रिकल **(IS/SI)** हों तो दो त्रिकल साथ-साथ हों ताकि दोनों मिलकर षटकल **(SSS/IISS/SIIS/SSII)** बन सकें। उसके बाद रगण **(SIS)** आना चाहिए। रगण के दोनों गुरुओं के स्थान पर दो-दो लघु भी हो सकते हैं, परंतु बीच वाला लघु अनिवार्य लघु है। उसे किसी लघु के साथ मिलाकर गुरु नहीं बनाया जा सकता। निम्नलिखित उदाहरण में 'आजकल' का भार 'रगण' के रूप में है, जिसका आखिरी गुरु दो लघु (कल) से बना है, जबकि तीसरे चरण का रगण 'में लगा' से, यानी गुरु-लघु-गुरु से बना है। दोहे की शुरुआत द्विकल से हुई है—

IIS S S SIS, IS IS SSI

अपनों से भी आजकल, बना हुआ अनजान ।

IISIIS S IS, II SS IISI

अपनी-अपनी में लगा, यह कैसा इनसान ॥

एक उदाहरण और देखिए—

S ISI SII IS, S II IS ISI

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग ।

SS II SII IS, IIS IS ISI

चंदन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग ॥

त्रिकल से शुरुआत—

चाह गई चिंता मिटी, मनुआ बेपरवाह ।

जिनको कछू न चाहिए, वे साहन के साह ॥

इसे और आसानी से समझने के लिए निम्नलिखित सूत्र का पालन करना चाहिए :

पहले और तीसरे चरण में 13 मात्राओं के लिए--

(1) 2-2-2-2-2-3

(2) 4-4-2-3

(3) **3-3-2-2-3**

(4) 3-3-4-3

दूसरे और चौथे चरण में 11 मात्राओं के लिए—

(1) 2-2-2-2-3

(2) 4-4-3

(3) 3-3-2-3

6) मात्रा-गणना में चूक : कुछ रचनाकार आधा स से बने शब्दों जैसे– स्कूल, स्थान जैसे शब्दों में पाँच मात्राएँ गिनकर दोहे में प्रयुक्त कर देते हैं। यह ग़लत है। इनमें तीन मात्राएँ हैं, बोलने में भले ही कुछ लोग पाँच-मात्रिक बोलें। अतः ऐसे शब्दों के प्रयोग में सावधानी बरतने की आवश्यकता है। ऐसा ही एक दोहा देखिए जिसके दूसरे चरण में 'स्कूल' को पाँच मात्राओं में गिना गया है—

गली-गली में खुल गए, नफ़रत के स्कूल ।
मास्टर जी सिखला रहे, 'ब' से पढ़ो बबूल ।।

7) मात्रिक विधान में लाने के लिए शब्दों से तोड़मरोड़ : कई दोहाकार किसी शब्द को दोहे के किसी चरण में फ़िट करने के लिए उसकी वर्तनी को बिगाड़ देते हैं तो कभी नहीं भी बिगाड़ते हैं, पर पढ़ते समय दोहे को लय में लाने के लिए उसे बिगाड़ कर पढ़ना पड़ता है। इससे दोहे का भाषिक सौंदर्य नष्ट हो जाता है और अच्छे-से-अच्छे भाव की बलि चढ़ जाती है। कुछ उदाहरण देखिए:

निम्नलिखित दोहे में लय को ध्यान में रखते हुए 'उच्छ्वास' **(SISI)** को 'उछ्वास' **(SSI)**, अर्थात एक मात्रा कम करके पढ़ना पढ़ रहा है—

मत इसको कविता कहें, यह है काव्याभास ।
भावुक की अभिव्यक्ति है, छंदबद्ध उच्छ्वास ॥

निम्नलिखित दोहे में पृथ्वीराज चौहान जो व्यक्तिवाची संज्ञा है जिसमें कोई तोड़मरोड़ नहीं की जानी चाहिए, को दूसरे चरण में रखा गया है। इसे यदि ज्यों का त्यों पढ़ें तो इसमें लय नहीं है। लय में लाने के लिए इसे 'पृथ्विराज चौहान' पढ़ना पड़ेगा, परंतु तब इसमें दस मात्राएँ ही रह जाएगी। ग्यारह मात्राओं में लाने के लिए इसे 'पृथ्वीराज चुहान' पढ़ना पड़ेगा—

सुबह-सुबह पथ पर मिले, पृथ्वीराज चौहान ।
बाँध गले में जेवरी, घुमा रहे थे श्वान ॥

इसी प्रकार, एक दोहे में सॉनेट **(SII)** को **(SSI)** पर बाँधकर एक मात्रा बढ़ा ली गई है। क़ायदे की बात तो यह है कि जिस भाषा से हम शब्द लें, उसे उसी के अनुसार उच्चरित करें या उसकी मात्रा-गणना करें। कुछ कवियों का मानना है कि हिंदी में 'ए'

लघु नहीं होता। इसलिए ए की मात्रा लगे अक्षर गुरु होंगे। ठीक बात है, लेकिन फिर आप ऐसे शब्द लेते ही क्यों हैं जिसमें ए लघु **(I)** वर्ण की भाँति प्रयुक्त होता है, जैसे— चेहरा **(IIS)**, सिगरेट **(SII)**, पेन **(II)**, नेट **(II)**, इंटरनेट **(SSII)**। मेरे हिसाब से उन्हें उसी रूप में लिए जाने चाहिए जैसे वे बोले जाते हैं—

चाहे मीरा पद रचे, शेक्सपियर सॉनेट ।
बात सभी में प्रेम की, कैसी लाग-लपेट ॥

2- तुकांत

दोहे में तुकांत के बारे में भी अधिकतर कवि जानते ही हैं कि वह दूसरे चरण के अंत में आने वाले शब्द का होता है। लेकिन इस बात पर कम ध्यान रहता है कि तुकांत वाले शब्द में स्वर-साम्य रहना चाहिए। इसके लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देने की ज़रूरत है—

(1) अनुनासिक वाले शब्द का प्रयोग न हो, जैसे— मीच/सींच, सोच/खरोंच, गाँव/प्रभाव। एक उदाहरण देखिए—

हिम की घातें सह रहा, सूरज आँखें मीच ।
लोग आजकल आग से, हरे दूब को सींच ॥

(2) 'स' से समाप्त होने वाले शब्द का तुकांत 'श' या 'ष' से समाप्त होने वाले शब्द अथवा उसके उलट से कर लेते हैं। यह त्रुटिपूर्ण ही होगा, भले 'चल जाता है' या 'और तमाम लोगों ने ऐसा किया है' की तर्ज़ पर चला दिया जाए। पर इससे दोष समाप्त नहीं हो जाता। इसी प्रकार, 'न/ण' अथवा 'ट/ठ' अथवा इसके उलटे तुकांतों का मामला है। कई जगह तो 'सकून' का तुकांत 'ख़ून' देखने को मिलता है। उदाहरण देखिए—

हरी दूब की देह पर, मोती जैसी ओस ।
भरने आती धूप नित, अपना ख़ाली कोष ॥

मेरे हक़ में है यही, रहूँ सदा ख़ामोश ।
जब-जब बोलूँगा मुझे, दोगे तब-तब दोष ॥

दवा-दुवाएँ क्या करें, जब मुमूर्ष इनसान ।
अपनों को कर संक्रमित, स्वयं ले रहा प्राण ॥

खंडहरों में हैं दबीं, संस्कृतियाँ उत्कृष्ट ।
मोरपंख की लेखनी, भोजपत्र के पृष्ठ ॥

बुलबुल रोती रात भर, कैसे मिले सकून ।
लगा बाज़ की दाढ़ से, गौरया का ख़ून ॥

(3) कुछ शब्दों में स्वर साम्य रहता है, पर वे स्वतंत्र तुकांत नहीं होते। उनमें तुकांत का आभास होता है, पर होता नहीं, जैसे— याद/फरियाद, सय्याद, संबंध/प्रतिबंध, श्लोक/लोक। दो उदाहरण देखें—

मिल मालिक ने कुचल दी, श्रमिकों की फरियाद ।
ईस्ट इंडिया कंपनी, आई फिर से याद ॥

(पहले चरण के अंत में यगण भी है)

आँसू, आहें, स्वेद से, है इनका संबंध।
क्या हलधर के स्वप्न पर, लगे हुए प्रतिबंध ॥

सन्नाटे में गूँजती, बन गीता का श्लोक ।
धूप-दीप-सी जल सदा, देतीं गंधालोक ॥

(4) कुछ तुकांतों में स्वर में थोड़ा-सा बदलाव होता है, पर वह नज़र में न आए, इसलिए मूल शब्द की वर्तनी बदल दी जाती है, जैसे निम्नलिखित दोहे में 'द्वंद्व' को 'द्वंद' लिख दिया गया है। इसी प्रकार एक दोहे में 'रीति' को 'रीत' कर दिया गया है—

भरा हवाओं में ज़हर, पानी बोतल-बंद।
रक्षा पर्यावरण की, और विकास का द्वंद॥

साहित्यिक संसार में अजब चली यह रीत ।
महानगर में बैठ वे, रचें गाँव के गीत ॥

(5) कुछ तुकांतों में अकारांत की जगह इकारांत या उकारांत आ जाते हैं, जैसे—

देखा वह सब सूर्य ने, जो कि असूर्यंपश्य ।
मैं भी नापूँ वे क्षितिज, जो रह गए अदृश्य ॥

(6) जब किसी शब्द में आखिरी अक्षर से पहले आधा अक्षर आता है तो तुकांत में उसी आधे अक्षरवाले शब्द से मिलता-जुलता शब्द आना चाहिए, तभी शब्द-साम्य हो सकेगा, अन्यथा नहीं। निम्नलिखित दोहे में इस नियम का पालन नहीं हुआ है। फ़र्क़ आप स्वयं देखें—

आत्मा के सौन्दर्य का, शब्द रूप है काव्य।
मानव होना भाग्य है, कवि होना सौभाग्य॥

(यहाँ काव्य का तुकांत 'आव्य' से बने शब्द हो सकते हैं, अन्य किसी 'आग्य' आदि से नहीं।)

(7) उर्दू के तलबिंदु वाले शब्द या अंग्रेज़ी के ऑ के उच्चारण वाले शब्दों के तुकांत हिंदी के शब्दों से, अथवा इसका उलटा, जैसे—

धन दौलत चाहूँ नहीं, चाहूँ नहीं दहेज़।
बाबुल तेरा आसरा, यादें रखीं सहेज॥

पिता-पुत्र टिपटॉप हैं, बीवी है टिपटॉप।
बस रद्दी सामान है, घर में बूढा बाप॥

(8) कुछ शब्द तुकांत के तो होते हैं, लेकिन उनमें भाषागत इतना अंतर होता है कि दोहा बेमज़ा हो जाता है, जैसे

निम्नलिखित दोहों में तत्सम और उर्दू के शब्दों से बने तुकांत—

आ जाती हैं दूरियाँ, जब दिल के दरम्यान।
रिश्तों से माधुर्य का, हो जाता अवसान॥

अलग शाख से जब हुए, सूखे पीले पात।
खाद बने जड़ से मिले, हर्षाए जज़्बात॥

(9) कुछ दोहाकार अभी भी 'आय/जाय/खाय/पाय' जैसे तुकांतों में फँसे हुए हैं। इससे ऊपर उठने की ज़रूरत है। एक उदाहरण देखिए—

ममता के आँचल तले, सारा सुख मिल जाय ।
बंधन यह अतुलित बड़ा, नहीं सभी हैं पाय ॥

3- भाषा

दोहे की भाषा का कोई निश्चित नियम नहीं, इसकी भाषा भावानुरूप होनी चाहिए। अर्थात जैसे भाव, वैसी भाषा। भाव भी प्रसंग या संदर्भ के अनुसार होते हैं, अतः भाषा भी उसी परिवेश से निकलती है। जैसे राजनीतिक या सामाजिक विसंगति पर कोई दोहा कहा जा रहा है तो बोलचाल के शब्दों वाली भाषा ही उपयुक्त होगी। यदि उसमें व्यंग्य अथवा करुणा है तो भाषा की कलाकारी से भाव का ह्रास हो जाएगा— व्यंग्य मर जाएगा या भोथरा हो जाएगा, करुणा हास्यास्पद हो जाएगी। इसी प्रकार, नीति और उद्बोधन देने वाले दोहों की भाषा भी बोलचाल के शब्दों से बनी होनी चाहिए ताकि जो बात कही जा रही है वह आसानी से व्यक्त हो जाए और समझ में आ सके। भाषा का प्रयोग मूल भाव को भटका देगा। परंतु यदि प्रकृति के चित्रण की बात हो तो उसमें भाषा का तत्सम रूप अधिक उपयुक्त होगा। यह कला-सौंदर्य के उत्स की बात है तो भाषा भी उसी के अनुरूप होनी चाहिए। बोलचाल की भाषा से आशय है कि हम दैनिक व्यवहार में जो भाषा बोलते हैं, उसका व्यवहार करना, बस उसमें अवधी, ब्रज या भोजपुरी के पुट से बचें, उसे तत्सम की तरह रहने दें।

भाषा को लेकर दोहाकार जो प्रायः गलती करते हैं, उन बिंदुयों को यहाँ समेटने की कोशिश की गई है:

1) क्रियापद में आय-जाय जैसे शब्दों का प्रयोग

क्रियापदों में आय, जाय, खाय, पाय से बचें, जैसे कबीर, तुलसी, रहीम आदि पुराने कवियों के दोहों में है। इधर के कवि भी अभी इसी जाल में फँसे हैं, जैसे—

यौवन रस के साथ गर, फागुन-रस घुल जाय ।
यही पाय बौराय नर, वही पाय बौराय ॥

(इस दोहे पर बिहारी के कनक-कनक ते सौ गुनी... वाले दोहे की छाया भी पड़ रही है। अतः मौलिकता न होने के कारण इसकी सराहना नहीं की जा सकती।)

2) संबंधकारक शब्दों का ग़लत प्रयोग

कभी-कभी संबंधकारक शब्दों का सही प्रयोग नहीं होता जिससे भाव भले स्पष्ट हो जाए, लेकिन उसको ग्रहण करने में बाधा उत्पन्न होती है, जैसे निम्नलिखित दोहे में, 'आकाश में', के बजाय 'आकाश पर' का प्रयोग किया गया है—

बचपन में तुमने हमें, लिखे कभी जो पत्र ।
सुधियों के आकाश पर, चमके बन नक्षत्र ॥

3) सटीक शब्द का प्रयोग न होना

भाव-स्पष्टता हेतु सटीक शब्द के प्रयोग की आवश्यकता होती है, लेकिन कुछ दोहाकार ऐसे शब्द प्रयोग कर लेते हैं जो वह अर्थ नहीं दे पाते, जिसकी वहाँ ज़रूरत होती है, जैसे निम्नलिखित दोहे में (शराव के) 'पौवे' की जगह 'पाव' का इस्तेमाल हुआ है। 'पाव' चौथाई भाग को भी कहते हैं और पाव-रोटी को भी। इस दृष्टि से पाव शब्द से सटीक अर्थ नहीं मिलता—

घीसू-माधो ख़ुश हुए, सम्मुख देख चुनाव ।
क़फ़न मिले चाहे नहीं, रोज़ मिलेगा पाव ॥

4) अनावश्यक शब्द-प्रयोग या शब्दों की पुनरावृत्ति

कभी-कभी मात्रा-पूर्ति अथवा सर्वनाम की जगह संज्ञा का प्रयोग भाषा पर भार बन जाता है और दोहा अपनी अहमियत खो देता है। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि भाषा के अनुशासन से ही कविता चुस्त-दुरुस्त बनती है और उसकी प्रभावशीलता बढ़ जाती है। क्या आपने किसी तुतले या हकले व्यक्ति की बात में वज़न देखा है? वैसे शब्दों की पुनरावृत्ति से अलंकार भी उत्पन्न होता है। हमें दोनों ही स्थितियों का भेद मालूम होना चाहिए। दो दोहे देखिए : एक में शब्द की पुनरावृत्ति खटक रही है जबकि दूसरे में वह अलंकार का काम कर रही है—

त्रेता में थी मंथरा, त्रेता में थे राम ।
आज मंथरा हैं कई, राम हुए गुमनाम ॥

बेहतर होता कि यदि दूसरे 'त्रेता मे' की जगह 'और तभी' पद का प्रयोग होता। अब वह दोहा देखिए, जहाँ 'प्यार' शब्द तीन बार आया है, लेकिन वह खटक नहीं रहा—

प्यार न देखें जातियाँ, प्यार न देखे धर्म ।
प्यार देखता मर्म को, नहीं देखता चर्म ॥

हालांकि यहाँ, 'प्यार न देखें जातियाँ' की जगह 'प्यार न देखे जाति को', अच्छा विकल्प है। इससे कर्म के वचन में एकरूपता भी आ जाएगी जो दोहे को और पुष्ट बना देगी।

एक और दोहा देखिए जिसके पहले और दूसरे चरण में 'वस्त्रविहीन' शब्द एक ही अर्थ में दो बार आया है पर दोहे में जो व्यंग्य छिपा है, उससे भाषिक सौंदर्य बना हुआ है, हालांकि तीसरे चरण पर अभी और मेहनत की ज़रूरत है। दोहे की जो बंदिश है, उसके अनुसार पहला और दूसरा चरण तो अच्छा बन पड़ा है, पर तीसरे और चौथे चरण में वह बात नहीं आ पाई है। चौथे चरण में आए पद, 'से दीन' की भूमिका तीसरे चरण में आनी चाहिए थी, जैसे—

कल पैसों से दीन थे, अब फ़ैशन से हीन।

5) भाषा का विद्रूप

दोहे की भाषा सहज बोलचाल की हो, लेकिन मर्यादा में रहनी चाहिए। उसमें अपशब्द या उसके जैसी झंकार नहीं आनी चाहिए, जैसा कि निम्नलिखित दोहे में है। यहाँ कमीना को कमीन कहा गया है, जो काव्य की भाषिक मर्यादा के विपरीत है—

करें भरोसा कौन पर, किस पर करें यक़ीन ।

जिस पर दुनिया वार दी, निकला वही कमीन ॥

इसी प्रकार, एक दोहे में ठिकाना शब्द को ठिकान के रूप में प्रयुक्त किया गया है—

कभी न जुम्मन को कहें, जा तू पाकिस्तान ।
यहीं गड़ी है नाल भी, उसका यहीं ठिकान ॥

(तीसरे चरण के पद, 'नाल भी' में, 'भी' अनावश्यक है। इससे प्रश्न उठता है क्या कुछ और भी गड़ा है?)

6) बिम्बों का अस्वाभाविक वर्णन

भाषा के तीन रूप होते हैं : अभिधा, व्यंजना और लक्षणा। दोहे में भाव के अनुरूप भाषा की इन शक्तियों का प्रयोग होता है। बिम्ब-प्रतीक योजना व्यंजना और लक्षणा का हिस्सा है। अभिधा में सरल-सपाट ढंग से बात की जाती है जो पाठक या श्रोता को सीधे-सीधे समझ में आ जाती है। नीति, उद्बोधन आदि के लिए भाषा का यह रूप उपयुक्त है और प्रचलित भी खूब है। तुलसी और रहीम के तमाम दोहे इसी भाषा शक्ति के उदाहरण हैं। इसमें शब्दालंकार आसानी से देखने को मिल जाता है, लेकिन अर्थालंकार व्यंजना और लक्षणा में ही देखने को मिलते हैं। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि भाषा की इन शक्तियों में ही देखने को मिलते हैं।

रूपक के लिए बिम्ब-विधान ऐसा हो जो स्वाभाविक और मनोहारी हो, तभी उसका आनंद है। अगर वह खंडित या अपूर्ण है, या सटीक नहीं है तो उससे अभिधा शक्ति ही भली। कुछ उदाहरण देखिए—

नेता से कुर्सी कहे, तू क्यों रोंदे मोय ।
सर पर तेरे बैठकर, मैं रोंदूँगी तोय ॥

दोहे में कुर्सी द्वारा नेता को रौंदने की बात कही गई है, जो अस्वाभाविक है। कथ्य का विधान कबीर के प्रचलित दोहे वाला है-- माटी कहे कुम्हार से..., जो नक़ल पर आधारित है। ऐसे दोहे कैसे सराहे जा सकते हैं?

आज रोज़ इक निर्भया, लुटा रही है लाज ।
धर्मराज-सा शीशनत, बैठा आज समाज ॥

इस दोहे से ऐसा चित्र में निर्भया द्वारा लाज लुटाने का आरोप है, जबकि आरोप यह होना चाहिए कि उसकी लाज कुछ दरिंदों द्वारा लूटी जा रही है और समाज शर्मिंदा हो चुप बैठा है।

निम्नलिखित दोहे में उपमान उलट गए हैं– फूल, सुख का प्रतीक है और शूल दुख का, परंतु दिखाया इसका उलटा गया है—

दोनों के अस्तित्त्व से, निर्मित होते मूल ।
सुख गुलाब के शूल हैं, दुख गुलाब के फूल ॥

कभी-कभी बिम्ब-निर्माण में जब एक ही जीव या पदार्थ के बारे में बात के सापेक्ष दो जीव आ जाएँ तो उसके निर्माण में बाधा उत्पन्न होती है, जैसे निम्नलिखित दोहे के वर्णन के केंद्र में

बकरा है, लेकिन कवि बकरे के साथ-साथ ग़रीब (आदमी) को भी ले आया है। इससे बिम्ब की प्रभान्विति बिखर गई है—

ये झटके से मारते, वे कर रहे हलाल ।

बकरे और ग़रीब को, मरना है हर हाल ॥

यहाँ, 'और गरीब' अनावश्यक हैं। बकरा ख़ुद ही ग़रीब की भूमिका निभा रहा है। इनकी जगह कुछ ऐसे शब्द लाए जा सकते हैं जो स्थिति को व्यक्त करने में सहायक हों, जैसे— बकरे को लेकिन यहाँ, मरना है हर हाल।

इस दोहे की पहले और दूसरे चरण की बंदिश अच्छी है, लेकिन उसका निर्वाह अच्छी तरह से नहीं हो पाया। पहले चरण में वर्तमान अनिश्चित काल है, जबकि दूसरे चरण में वर्तमान सतत काल (कार्य अभी जारी) है। इससे उसका सौंदर्य कम हो गया है। दोनों का काल एक जैसा होना चाहिए।

7) मुहावरों का ग़लत प्रयोग

मुहावरों के सटीक प्रयोग से संप्रेषण आसान और प्रभावी हो जाता है, लेकिन उनके प्रयोग के बारे में सतर्कता की आवश्यकता होती है। भाव की माँग के अनुरूप यदि वे प्रयुक्त होते है तो दोहे में चार चाँद लग जाते हैं, अन्यथा वे भर्ती के शब्द बनकर रह जाते हैं। कभी-कभी वे अर्थ तो ख़ूब देते हैं, लेकिन पूर्व कथन की पृष्ठभूमि से जुड़ते नहीं। ऐसा ही एक उदाहरण देखिए—

बातों से जिनकी झरे, हरसिंगार के फूल ।

वही समय के फेर से, मिले <u>फाँकते धूल</u> ॥

दोहे में कवि कहना चाहता है कि जो कभी मृदुभाषी थे, समय के फेर से आज वे धूल फाँक रहे हैं, अर्थात इधर-उधर घूम रहे हैं और उनको कोई पूछने वाला नहीं। समय के प्रभाव को लेकर जो बात कही गई है, वह एकदम सही है और मार्मिक भी है, लेकिन इसका शिकार कौन है जो मृदुभाषी था। क़ायदे से आरोप यह होना चाहिए था जो मृदुभाषी था और जिसकी बातों से हरसिंगार के फूल झरते थे, अब उसे कटु वचन सुनने पड़ रहे हैं। ऐसी दशा में धूल फाँकना मुहावरे का प्रयोग ग़लत मालूम पड़ता है।

कुछ दोहाकार मुहावरों और लोकोक्तियों को उनके मूल रूप में न रखकर लय या मात्रिक अनुशासन के लिहाज से अपने हिसाब से उनमें संशोधन कर देते हैं। इससे उससे निसृत होने वाली व्यंजना का ह्रास हो जाता है। दो उदाहरण देखिए—

उनकी क्या बातें करूँ, उनके अपने ठाठ।

कई पुश्त से कर रहे, <u>सोलह चौके आठ</u> ॥

हुई किसानी अब विकट, महँगे हुए मजूर।

<u>गिरे ताड़ के पेड़ से, अटके पेड़ खजूर</u> ॥

4- भाव पक्ष

उपर्युक्त बातें शिल्प से संबंधित हैं, जबकि यह भाव पक्ष कत्य से जुड़ी बात है। भाव कविता का प्राणतत्त्व है अतः इस पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। भाव-संयोजन को लेकर कुछ बातें जान लेना ज़रूरी हैं, जैसे पहले चरण में या दूसरे चरण को मिलाकर जिस भाव की स्थापना दोहे में की

गई है, उसे आगे कैसे बढ़ाना है या कैसे उसका विरोधाभास प्रस्तुत करना है। कभी-कभी दोनों पंक्तियों में दो अलग-अलग भाव रहते हैं, भले ही वे अच्छे हों, परंतु यदि वे आपस में जुड़ नहीं पाते, तो एक अच्छा दोहा नहीं बना सकते। कभी-कभी कथ्य का औचित्य सिद्ध नहीं होता या कथन युक्तियुक्त नहीं होता, परिणामतः एक अच्छा दोहा बनते-बनते रह जाता है।

1) कथ्य का औचित्य

दोहे में क्या कहा जा रहा है, उसका महत्त्व होता है लेकिन जो नहीं कहा गया है, उसका अधिक महत्त्व होता है। कहा भी गया है कि कविता अनकहे शब्दों में होती है। निम्नलिखित दोहा देखिए जिसमें सत्ता द्वारा सुविधाओं के बँटवारे में विसंगति का चित्र है। इसमें विसंगति की बात यह कहकर की गई है कि आज गधे को मिष्ठान्न और शेर को घास मिल रही है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि अगर जिस विसंगति का वर्णन किया गया है, वह न होती तो शेर को मिष्ठान्न मिल जाता और गधे को घास उपलब्ध रहती। प्रश्न यह उठता है कि क्या शेर को मिष्ठान्न मिलना चाहिए या उसे वह पसंद है—

गर्दभ को मिष्ठान्न दे, और शेर को घास ।
इससे ज़्यादा और क्या, राजनीति के पास ॥

निम्नलिखित दोहे में कवि कहता है कि घोटाला ऐसा हो जैसे आटे में नमक जिससे सत्ता और देश दोनों बचे रहें। कवि का काम घोटालों के विपरीत लिखना है न कि उनके पक्ष में भले ही वे आटे में नमक के बराबर क्यो न हों? दोहे की भाषा भी विचलित करने वाली है—

घोटाले इतने करो, आटे नमक समाय ।
कुर्सी भी क़ायम रहे, देश बचा रह जाय ॥

निम्नलिखित दोहे में पुल गिरने की आशंका व्यक्त की गई है, लेकिन कवि को पुल या उसके गिरने से लोगों की जान की चिंता नहीं, सरकार की चिंता है—

ग्रीष्म अभी बीता नहीं, पुल में पड़ी दरार ।
डूब न जाए बाढ़ में, कहीं भ्रष्ट सरकार ॥

निम्नलिखित दोहे में कवि पथिक को प्रेरणा दे रहा है कि उसका साथ देने वाला यहाँ कोई नहीं, इसलिए उसे लक्ष्यपथ पर अकेले ही बढ़ता रहना चाहिए, लेकिन उसने दीपक को हाथ में लेकर चलने की बात भी की है। लेकिन दीपक वाली बात का औचित्य नहीं प्रतीत होता, क्योंकि पूरे दोहे में अँधेरे का कोई ज़िक्र ही नहीं है—

आएगा कोई नहीं, यहाँ निभाने साथ ।
बढ़ता जा तू राह पर, दीपक लेकर हाथ ॥

2) बंदिश की गड़बड़ी

बंदिश से आशय है कि जब हम कोई मुहावरेदार पद बनाते हैं, तो दूसरा उसके अनुरूप होना चाहिए। यहाँ दो लोगों के कार्य-कलापों की बात की जा रही है, एक में 'हमारी' और दूसरे में 'उनकी'। लेकिन दोनों की क्रियाओं में अंतर आ गया है— हमारी मजबूरी है और उनकी मग़रूरी है। ज़रूरत थी एक ही क्रियापद की— कुछ हम भी मजबूर थे, कुछ वे भी मजबूर... तब बंदिश की ख़ूबसूरती थी। अभी, बस काम चला दिया गया है, बंदिश का

मज़ा बेकार हो गया। इसके अलावा फूलों के संतूर बजने की बात कही गई है। फूल का गुण है सुंदर दिखना और सुगंधि फैलाना। कवि ने फूल पर संतूर बजाने, यानी कुछ आवाज़ निकालने का आरोप लगाया है। यह अस्वाभाविक है। दोहा कुछ अच्छा भाव नहीं प्रकट कर पा रहा है, बस संकेत भर कर पा रहा है--

कुछ हम भी मजबूर थे, कुछ वे भी मग़रूर ।
सपनों में बजते रहे, फूलों के संतूर ॥

निम्नलिखित दोहे में 'लक्ष्मी' के बारे में बात की गयी है—

या तो लक्ष्मी है धवल, या लक्ष्मी है श्याम ।
श्याम रूप के सामने, श्वेत हुआ गुमनाम ॥

यहाँ ध्यातव्य है कि पहले चरण में 'या तो' आया है, लेकिन दूसरे में उसका पूरक पद, या फिर' नहीं आया है, जबकि वह आसानी से आ सकता था। उसकी जगह 'लक्ष्मी' शब्द आया है। इस चरण को अगर इस प्रकार कर दिया जाए तो दोहे की बंदिश अच्छी हो जाएगी—

या तो लक्ष्मी है धवल, या फिर है वह श्याम ।
श्याम रूप के सामने, श्वेत हुआ गुमनाम ॥

(हालांकि चौथा चरण, 'श्वेत हुआ गुमनाम' सटीक भाव नहीं दे रहा है। गुमनाम की जगह कोई ऐसा शब्द आना चाहिए था जिससे यह भाव निकलता कि श्याम रूपवाली लक्ष्मी के आगे श्वेत रूपवाली लक्ष्मी फीकी पड़ गयी है।)

3) भाव-अस्पष्टता

कुछ दोहे ऐसे भी देखने में आते हैं जहाँ सघन बिम्ब-विधान के बावज़ूद दोहाकार जो कहना चाहता है, वह भाव स्पष्ट नहीं हो पाता। ऐसे में दोहे की रचना व्यर्थ हो जाती है और दोहाकार को भी सम्मान नहीं मिलता। दो उदाहरण देखिए—

बैठ कबूतर तार पर, रहा खुजाता पाँख ।
पाँखों में चुभने लगी, जब बिजली की आँख ॥

5- अन्य शिल्पगत दोष

एक अच्छे दोहे के लिए ज़रूरी है कि उसमें यति का भी पालन हो, स्वरों की टकराहट न हो और उसका ध्वन्यार्थ सुखकर हो। कविता छंद, लय और ध्वनि से बनती है। चित्रण, विश्लेषण और रचनात्मक दृष्टि कविता को ऊँचा उठाती है। दोहे में भी यही सब बातें लागू होती हैं। लय, भाषा, भाव के अलावा जो अन्य दो बातें महत्त्व की हैं, वे हैं यति और स्वरों का उचित स्थान।

1) स्वर की टकराहट

जब किसी शब्द के अंत में जो व्यंजन होता है, उससे तुरंत बाद ही वही व्यंजन या उस वर्ग का व्यंजन आता है तो स्वर की टकराहट पैदा होती है। इससे बचने की आवश्यकता है। कुछ उदाहरण देखिए—

कौन प्रशंसा सुन नहीं, होता हर्ष विभोर ।
किसको लगते प्रीतिकर, निंदा वचन कठोर ॥

गतानुगत इस लोक की, लोग करें परवाह ।
हम पग रख देते जहाँ, वहीं बनाते राह ॥

उत्पादन में हो कमी, कर लेना स्वीकार ।

बढ़े प्रदूषण साथ तो, करना नहीं विचार ॥

2) यति दोष

यह सर्वविदित है कि दोहे में यति हर चरण के अंत में होती है, लेकिन कभी-कभी कोई शब्द चरण के बाहर चला जाता है, तब यति का पालन नहीं हो पाता। इससे दोहे का सौंदर्य नष्ट हो जाता है। दो उदाहरण देखिए जिसमें सम्बंधकारक शब्द और सहायक क्रिया अगले चरण में चली गई है—

छप्पर-छानी-झोपडी, के न रहे अब गाँव।

गौरय्या के घोसले, को न बची है छाँव॥

और,

जिस बगिया में गूँजती, थी कोयल की कूक।

आज गरजती है वहाँ, बम-पिस्टल-बंदूक॥

उम्मीद है कि दोहे की स्वस्थ रचना में उपर्युक्त बातें सहायक होंगी। जिन दोहाकारों के दोहे उदाहरणस्वरूप दिए गए हैं, हो सकता है वे अपने दोहों में कोई दोष न मानते हों, अथवा चाहते हुए भी दोष दूर न कर पाए हों। तथापि, मुझे जैसा लगा, वह मैंने लिखा और यथावांछित विकल्प भी सुझाए, परंतु वे कोई अंतिम नहीं हैं, उससे अच्छे भी हो सकते हैं। यदि इससे वे अथवा कोई दोहाकार लाभान्वित होता है, तो मैं लेख को सार्थक समझूँगा।

-3/29 विकास नगर, लखनऊ-226 022
(मो.80096 60096)